International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 4, April 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सामाजिक लोकतंत्र पर अम्बेडकर दर्शन की प्रासंगिकता

डॉ. आशुतोष मीना
असिस्टेंट प्रोफेसर (लोकप्रशासन)
राजकीय महाविद्यालय आबूरोड़

सारांश

भारत में जाति–वर्ण व्यवस्था के अस्तित्व और परंपरागत रूप से शक्तिशाली वर्ग के प्रभुत्व ने निचले स्तर से लोकतांत्रीकरण की प्रक्रिया को खतरे में डाल दिया है। आज हम भारत की सामाजिक व्यवस्था में विकास व परिवर्तन के ऐतिहासिक क्षण देख रहे हैं। इस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बहुत से शोधार्थी डॉ बी आर अम्बेडकर की विचारधारा की प्रासंगिकता और महत्व की खोज कर रहे हैं। उन्होने हिन्दू धर्म के उन पहलुओं का अध्ययन किया कि कैसे इस व्यवस्था में मानवीय मूल्यों और मानव गरिमा का पतन हुआ। हम अक्सर 'सामाजिक न्याय' शब्द का उपयोग करते हैं, लेकिन शायद ही कभी इसे पूर्ण रूप से परिभाषित करते हैं क्योंकि समाज के अलग–अलग वर्गों के अलग–अलग दृष्टिकोणों में यह परस्पर विरोधी अर्थों में प्रयुक्त होता है। इसके अलावा यह एक बहु–संदर्भीय शब्द है इसके राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में व्याख्या और निहितार्थ अलग अलग हो सकते हैं। आधुनिक दृष्टिकोण में सामाजिक न्याय का संबंध किसी भी सीमा के बिना नए सामाजिक व्यवस्था की शुरुआत से है जिसमें सामान्य, विशेष, कमजोर, विशेष रूप से समाज के वंचित वर्गों के लिए या समाज के विभिन्न वर्गों के लिए अधिकार और लाभ प्रथक–प्रथक नहीं हों। भारत में सामाजिक लोकतांत्रीकरण की प्रक्रिया सामाजिक न्याय के माध्यम से ही शुरू की जा सकती है। आज दलितों के उद्धार व स्वाभिमान की बहाली की बहुत जरूरत है। डॉ बी आर अम्बेडकर की दृष्टि ने हमें भारत में सामाजिक न्याय प्राप्ति का व्यापक कार्यक्रम दिया है। इस प्रकार वास्तविक सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए सभी प्रगतिशील और लोकतांत्रिक ताकतों का कर्तव्य है कि डॉ बी.आर अम्बेडकर की वैचारिक दृष्टि को आत्मसात करें।

परिचय–

लगभग चार दशकों के अंतराल में अम्बेडकर विभिन्न संघर्षों से गुजरे। उन्होंने जनता के पानी पीने के अधिकार, अछूतों, वंचित वर्गों के अलग निर्वाचक मंडल के लिए संघर्ष किया। वह 1942 में वायसराय की कार्यकारी परिषद में लेबर मेंबर बने और बाद में स्वतंत्र भारत के पहले कानून मंत्री

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 4, April 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

बने। अन्तिम समय में उन्होंने हिंदू धर्म त्याग दिया और बौद्ध धर्म अपना लिया। उन्होने स्वयं को धार्मिक सुधार व सामाजिक मुक्ति आंदोलनों के लिए समर्पित कर दिया।

भारत में अशिक्षा, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, गरीबी, हठधर्मिता और अंतर्विरोधी संघर्ष जैसी कई समस्याओं का कारण भारत सरकार नागरिकों के बीच सामाजिक न्याय के आधार पर संपत्ति और दायित्वों के वितरण में विफलता है। दूसरा कारण नागरिकों को उनके अधिकारों, कर्तव्यों और जिम्मेदारियों के प्रति जागरूक नहीं किया जाता है और न ही सरकार स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसे सामाजिक मूल्यों को समाज में गहराई तक समायोजित कर पाई है। डॉ अंबेडकर का भारतीय संविधान को प्रारूपित करना पहला योगदान था और उनका दूसरा प्रमुख कार्य अपने सामाजिक दर्शन का प्रसार और प्रचार करना था।

भारत में कई सामाजिक विचारकों व सुधारकों द्वारा नागरिकों को उनके कर्तव्यों, अधिकारों और दायित्वों से अवगत कराने के प्रयास किए गए हैं। प्राचीन काल में चार्वाक, महावीर, बुद्ध, कबीर और नानक जैसे विचारकों ने भारतीयों को सामाजिक मूल्य सिखाने के प्रयास किए, सामाजिक एकता और धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा दिया। आधुनिक काल में सामाजिक और धार्मिक सुधारक जैसे राजा राम मोहन राय, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, प्रफुल्ल चन्द्र रे, ज्योतिबा फुले, आगरकर, वी आर शिन्दे, शाहू महाराजा और कई अन्य लोगों ने इसी तरह के प्रयास किए। यद्यपि डॉ बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक चिंतकों व सुधारकों की एक ही परंपरा से संबंधित हैं, लेकिन उनका योगदान महत्वपूर्ण व दूसरों से अलग है। डॉ अम्बेडकर ने कड़े शब्दों में पारंपरिक भारतीय समाज और धर्म पर आधारित सीधे हिंदू सामाजिक दर्शन पर हमला किया। उन्होने सामाजिक न्याय पर आधारित नए समाज के गठन पर बल दिया ताकि दमित वर्ग, महिलाओं और पिछड़े वर्ग का उत्थान हो सके। उन्हें यकीन था कि सिर्फ न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था से ही नागरिकों को अपने अधिकारों, दायित्वों के प्रति जागरूक और राष्ट्रवाद और देशभक्ति की भावना विकसित की जा सकती है। इस प्रकार डॉ अम्बेडकर ने भारतीय समाज की समालोचना की और राष्ट्रीय और सामाजिक एकीकरण का प्रयास किया। असमानता, दलित और पिछड़े वर्गों के साथ भेदभाव जैसी समस्याओं के सामाजिक हल के लिए उनके प्रयास सामाजिक न्याय की अवधारणा से प्ररित थे। इसलिए हमें भारत द्वारा सामना की जा रही सामाजिक समस्याओं के समाधान में डॉ अम्बेडकर के सामाजिक दर्शन का प्रयोग करना चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक न्याय—

हम विभिन्न दृष्टिकोणों जैसे राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक से सामाजिक न्याय को समझ सकते हैं। सामाजिक न्याय की एक सर्वसम्मत परिभाषा देना बहुत मुश्किल है। प्रो डी.आर. जाटव के अनुसार सामाजिक न्याय की परिभाषा— ''सामाजिक न्याय उस तरह का न्याय है जो कुछ

आदर्शों को मानव समाज से निकटता से निर्धारित करता है, यह व्यक्तियों, परिवार, समाज और राष्ट्र का अस्तित्व और निरंतरता का निर्वाह करता है, इसका कार्यान्वयन समाज के कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा करता है, यह मनुष्यों के बीच पाए गए सभी गंभीर अन्यायपूर्ण असंतुलन को दूर करता है ताकि सभी नागरिक बंधनमुक्त हों और उनके जीवन में सुधार हो, ताकि हर आदमी अपनी क्षमता और योग्यता के अनुसार अपनी पसंद के अनुसार सामाजिक लक्ष्य को प्राप्त करने के अवसरों का लाभ उठा सके"।[1]

मार्गदर्शक और मूल्यांकन सिद्धांत के रूप में सामाजिक न्याय बदलती स्थिति के अनुसार अन्यायपूर्ण रिवाज, परंपरा और सामाजिक संरचना के उन्मूलन या संशोधन का सुझाव देता है, यह लोगों के कल्याण और समाज के गरीब और कमजोर वर्गों के अधिकारों को संरक्षण व प्रोत्साहन देता है।

मानव जीवन और समाज के विभिन्न पहलुओं के साथ सामाजिक न्याय बहुआयामी है। यह उन लोगों के साथ अन्तर्व्यवहार करता है जिनको जानबूझकर शोषण, अन्याय व समाज से बहिष्कार का शिकार बनाया गया जैसे बंधुआ मजदूर और अवैतनिक मैला ढोने वाले।[2] सामाजिक न्याय उन नियमों, परंपराओं, हठधर्मिता, रीति–रिवाज व व्यवहार की आलोचना करता है जिनका उपयोग अन्याय के लिए किया जाता है।[3]

सामाजिक न्याय की अवधारणा के पीछे मूल रूप से दो विचार हैं–सामाजिक न्याय एक ईश्वरीय तत्व द्वारा शासित, दूसरा सामाजिक न्याय एक व्यक्ति द्वारा शासित होता है। जहाँ तक पहले विचार का संबंध है, इसकी पूर्व वैदिक काल में वकालत की गई जहां ईश्वर और कर्म सिद्धांत की निश्चित अवधारणा थी। दूसरे विचार की चार्वाक, बौद्ध और जैन दर्शन ने वकालत की थी, उन्होंने ईश्वरीय तत्व को महत्व देने के बजाय मनुष्य की प्रधानता और उसके तर्कसंगत कार्यों को महत्व दिया।

डॉ अम्बेडकर ने कहा कि सामाजिक न्याय की अवधारणा नैतिक और कानूनी है। उनकी सामाजिक न्याय की अवधारणा स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्वत जैसे मानवीय मूल्यों पर आधारित थी।[4] अम्बेडकर प्रो बर्जबोन के स्पष्टीकरण से सहमत थे "न्याय ने हमेशा समानता के विचार को विकसित किया है। नियम और कानून में तर्कसंगत संबंध समानता के मूल्य से है। यदि सभी पुरुष समान हैं, तो सभी पुरुष एक ही सार और सामान्य सार हैं जो उन्हें समान मौलिक अधिकारों और समान स्वतंत्रता का अधिकार देता है"।[5]

उनका मानना था कि यदि व्यक्तियों द्वारा इन मूल्यों का सम्मान किया जाता है तो न तो जाति बाधाएं उन्हें विभाजित करेंगी, और न ही किसी व्यक्ति के कैरियर को रोकने वाली जातिगत बाधाएं होगी। प्रत्येक व्यक्ति में दूसरों के प्रति सहानुभूति और सम्मान होगा। डॉ अम्बेडकर ने इसे

सामाजिक लोकतंत्र कहा, यह जीवन जीने का एक तरीका है जो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व पर आधारित है।[6] डॉ अम्बेडकर ने कहा, "ये तीनों त्रिमूर्ति का मिलन है इनका एक दूसरे से प्रथक होना ही लोकतंत्र के उद्देश्य की हार है"।[7]

डॉ अम्बेडकर के अनुसार स्वतंत्रता मानव को उसकी अभिव्यक्ति का अवसर देती है। स्वतंत्रता के माध्यम से व्यक्ति की छिपी हुई प्रतिभा व्यक्त होती है। यह मनुष्य को अपना भाग्य स्वयं बनाने में सक्षम बनाता है। समानता व्यक्तियों को एक साथ पारस्परिक सहयोग और सामाजिकता सहानुभूति से बांधती है। बंधुत्व एक ऐसा वातावरण बनाता हैं जो समानता और स्वतंत्रता के आनंद के लिए अनुकूल है। डॉ अंबेडकर के अनुसार "भ्रातृत्व का मतलब है सभी भारतीयों में सामान्य भाईचारे की भावना, सभी भारतीय एक व्यक्ति हैं। यह सिद्धांत है जो सामाजिक जीवन के लिए एकता और एकजुटता देता है"।[8]

प्रो जाटव ने सामाजिक न्याय की डॉ अम्बेडकर की अवधारणा को जीवन की एक विधि करार दिया जिसमें प्रत्येक व्यक्ति समाज में अपना सही स्थान रखता है। ''इसके नियम हो सकते हैं जैसे सम्मानपूर्वक जीना, सभी का सम्मान करना, किसी को भी हानि न पहुँचाएं, और प्रत्येक व्यक्ति को मन में बिना किसी कृत्रिम भेदभाव के व समाज में अप्राकृतिक वर्गीकरण के बिना उसका हक मिले। सामाजिक न्याय के अन्य गुणों में संवैधानिक शासन की सर्वोच्चता, कानून के समक्ष समानता, मौलिक अधिकारों की रक्षा, कर्तव्यों की पालना, सामाजिक और कानूनी दायित्वों का पालन, और अंत में स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व के मूल्यों और मानव व्यक्तित्व की गरिमा में अटूट विश्वास है"।[9]

संक्षेप में, डॉ अंबेडकर की सामाजिक न्याय की अवधारणा का सार एकता और सभी मनुष्यों की समानता है, स्वतंत्र रूप से वर्ग, जाति, और लिंग से परे विचार, सम्मान के साथ सम्मान, अधिकार, परोपकार, आपसी प्रेम, सहानुभूति, सहिष्णुता और सभी प्राणियों के प्रति दया, सभी नागरिकों की गरिमा, जाति–भेद का उन्मूलन, सभी के लिए शिक्षा और संपत्ति, अच्छी मंशा और सज्जनता।[10] डॉ अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय पर जोर दिया क्योंकि इसमें सभी प्रकार के न्याय शामिल हैं, अर्थात कानूनी, आर्थिक, राजनीतिक, दैवीय, धार्मिक, प्राकृतिक, प्रशासनिक न्याय के साथ बच्चों और महिलाओं का भी कल्याण।[11]

डॉ अम्बेडकर द्वारा हिंदू सामाजिक व्यवस्था की समालोचना–

सामाजिक व्यवस्था का आलोचनात्मक मूल्यांकन करते हुए डॉ अम्बेडकर एक ओर बताना चाहते थे कि इस सामाजिक व्यवस्था का उद्देश्य ब्राह्मणों के अधिकार और शक्तियों की किस तरह से रक्षा करना था और दूसरी ओर वह उन तर्कों का खंडन करना चाहते थे जो इस व्यवस्था के समर्थन में दिए गए थे। डॉ अम्बेडकर ने बताया कि हिंदू दर्शन और सामाजिक व्यवस्था दोनों ही मानवीय

मूल्यों और अधिकारों के विपरीत हैं–जो कि विशेष रूप से ब्राह्मण समुदाय के कल्याण के लिए बनाए गए थे।

हिन्दू धर्म दर्शन पर अम्बेडकर–

डॉ अम्बेडकर ने हिंदू धर्म की विशेषता बताई कि यह निश्चित उद्देश्य के साथ इतिहास में निश्चित अवसर पर निर्मित हुआ। इसके दिव्य शासन व्यवस्था के अपने नियम हैं। यह दावा करता है कि इसकी मूल्य व्यवस्था भी दिव्य है। इसकी अपनी आचार संहिता है जो धार्मिक, कर्मकांड और व्यक्ति के दैनिक व्यवहार को निर्धारित करती है।[12] आचार संहिता ईश्वरीय थी, डॉ अंबेडकर के अनुसार धर्म की ये सभी विशेषताएं हिंदू धर्म पर लागू होती हैं। भारत में इससे पूर्व बौद्ध धर्म के अपने लिखित कोड थे। इससे पता चलता है कि हिंदू धर्म सनातन धर्म नहीं था, बल्कि ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान था, ब्राह्मण धर्म कर्मकांडी और वर्ण व्यवस्था का रक्षक था। इस धर्म के अनुसार जाति व्यवस्था एक दैवीय योजना है।[13]

डॉ अम्बेडकर के अनुसार में न्याय की अवधारणा में स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसी नैतिक अवधारणाएं शामिल हैं। उन्होंने बताया कि हिंदू धर्म समानता को स्वीकार नहीं करता है।[14] हालांकि, उनके अनुसार मनु जाति व्यवस्था के ग्रेडेशन और रैंक के सिद्धांत को बनाए रखने के लिए जिम्मेदार है। डॉ अंबेडकर ने लिखा "मनु की योजना में ब्राह्मण को पहले स्थान पर रखा गया, उसके नीचे क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र और शूद्र के नीचे अछूत को रखा गया। रैंक और ग्रेडेशन की यह प्रणाली असमानता के सिद्धांत को लागू करने का एक तरीका है। यह असमानता विभिन्न वर्गों के बीच एक स्थायी सामाजिक संबंध है जो सभी स्थानों पर और हर समय लागू होती है। जीवन के हर चरण में मनु ने असमानता को जीवन की अत्यावश्यक विषय वस्तु बताया और इसे स्थापित किया"।[15] वर्ण और जाति के माध्यम से आश्रमव्यवस्था, दासता और असमानता के कुछ उदाहरण हैं जो हम हिंदू सामाजिक व्यवस्था में पाते हैं।[16] नियम बनाते समय मनु ने इस बात को लेकर पर्याप्त सावधानी बरती कि असमानता का सिद्धांत नष्ट न हों। हिंदू धर्म स्वतंत्रता के सिद्धांत में विश्वास नहीं करता। व्यक्तिगत व्यवसाय निश्चित और पूर्व निर्धारित है। उसे उसकी पसंद का व्यवसाय चुनने का कोई अधिकार नहीं है। हिंदू धर्म शूद्रों को धन संचय करने की अनुमति नहीं देता है। इस प्रकार हिंदू धर्म में आजीविका, आर्थिक स्वतंत्रता या आर्थिक सुरक्षा का कोई विकल्प नहीं है।[17]

डॉ अंबेडकर ने यह बताया कि हिंदू धर्म भाईचारे की भावना को प्रोत्साहित नहीं करता है क्योंकि इस श्रेणीबद्ध सामाजिक व्यवस्था में स्पष्ट भिन्न वर्ग हैं। उन्होंने इस बिन्दू को और स्पष्ट किया कि 3000 जातियाँ और उपजातियाँ हैं जिसके कारण सामाजिक जीवन खंडित है। इसी तरह हिंदू धर्म अंतर–जातीय विवाह की अनुमति नहीं देता। इसलिए हिंदुओं में भ्रातृत्व भावना की कमी है।[18]

Vol. 9 Issue 4, April 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

उन्होंने तर्क दिया कि हिंदू धर्म एक सुपरमैन यानि ब्राह्मण का उपासक व ब्राह्मण केंद्रित धर्म है। ब्राह्मण को खुश करने के लिए सभी नियम और आचार संहिता बनाई गई। यह धर्म और हिंदू सामाजिक व्यवस्था, व्यक्ति अपने गुणों और कौशल को विकसित करने के लिए ब्राह्मण के अलावा अन्य जातियों से संबंध की अनुमति नहीं देता, इसके अलावा यह समाज में ऐसा माहौल नहीं बनाता है जहाँ व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास हो सके।[19]

जाति व्यवस्था के विरूद्ध–

डॉ अंबेडकर ने जाति व्यवस्था के अपने महत्वपूर्ण मूल्यांकन को जाति के मूल उद्भव की व्याख्या करके समझाया कि अपनी ही जाति में विवाह (एंडोगेमी) जाति व्यवस्था का एक अनिवार्य लक्षण है, यही जाति व्यवस्था के लिए जिम्मेदार है।[20] उन्होंने बताया कि मनु के समय से विवाह के नियम अधिक कठोर हो गए। मनु ने इन नियमों को संहिताबद्ध करके धार्मिक नियम घोषित किया। अंतर्जातीय विवाह को ईश्वरीय इच्छा के विरुद्ध एक पाप माना गया। जिस व्यक्ति ने नियम तोड़ा उसे मुख्य जाति से बहिष्कृत किया गया। इनको इनके ही समूह में विवाह करने तक सीमित कर दिया। डॉ अम्बेडकर के अनुसार जाति व्यवस्था की उत्पत्ति ब्राह्मणों के स्वार्थी उद्दंश्यों में हुई और मनुस्मृति की तरह धार्मिक ग्रंथों के समर्थन से यह और अधिक कठोर हो गयी। डॉ अंबेडकर ने जाति व्यवस्था के खिलाफ मजबूत तर्क दिए। जाति व्यवस्था को हिंदू सामाजिक संरचना व नियमों में उलझा दिया गया। चार जातियों में विभाजित पदसोपानिक सामाजिक प्रणाली पोषित होती गई। इस प्रणाली में व्यक्ति की सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक स्थिति जन्म आधारित जाति के आधार पर निर्धारित की गई, उसे अपनी जाति बदलने का कोई अधिकार नहीं था। जाति व्यवस्था में किसी भी भूमिका में सकारात्मक मानवीय मूल्यों की अनुमति नहीं थी। नतीजतन भारतीय समाज में गतिशीलता, प्रगति, एकता और एकीकरण नहीं था। डॉ अंबेडकर ने न केवल हिंदू सामाजिक संरचना के खिलाफ तर्क दिया, बल्कि इस जाति व्यवस्था के निर्माण के सिद्धांत का मूल्यांकन किया।[21]

कई बार जाति व्यवस्था को श्रम विभाजन के सिद्धांत पर आधारित बताया गया। अम्बेडकर के अनुसार अगर यह वास्तव में श्रम विभाजन पर आधारित होती तो व्यक्ति को पारंपरिक रूप से थोपा गया व्यवसाय बदलने की अनुमति होती। इसका पहला कारण यह विभाजन व्यक्ति को एक जन्मजात व्यवसाय करने को बाध्य करता है। दूसरा, उसे अपने कौशल को विकसित करने के अवसर से भी वंचित किया गया। तीसरा, व्यक्ति का व्यवसाय को जन्म से पूर्व निर्धारित करना भी अन्याय था। चौथा, जब किसी व्यक्ति को उसकी पसंद के विपरीत काम करने के लिए मजबूर किया जाता है, इसका व्यक्ति की कार्यक्षमता के साथ–साथ समाज पर भी प्रतिकूलता प्रभाव पड़ता है।

डॉ अंबेडकर के अनुसार जाति व्यवस्था ने हिंदू समाज के विकास में कई बाधाओं को जन्म दिया। डॉ अंबेडकर ने कहा तेजी से बदलती अर्थव्यवस्था में किसी व्यक्ति को उसकी पसंद से

व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता होनी चाहिए अन्यथा वह बदलती स्थिति के साथ समायोजित होने में असमर्थ होगा। जाति व्यवस्था कभी भी व्यक्ति को उसका व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता नहीं होने से व्यक्ति परिस्थिति के अनुकूल परिवर्तन के लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं होता। यह उसे अपनी आजीविका कमाने के लिए कठिनाई उत्पन्न करती है। व्यक्ति के विकास के साथ–साथ़ समाज के निर्माण में बाधाएँ उत्पन्न हुई। अन्तर्जातीय विवाह और सह–भोजन पर प्रतिबंध के कारण लोगों के एक साथ आने और अपने विचारों का आदान–प्रदान करने का अवसर नहीं था। इसके अलावा एकता की भावना उत्पन्न नहीं हो सकी। देश में सामाजिक सामंजस्य की कमी थी परिणाम स्वरूप बाहरी आक्रमणकारियों के लिए भारत बहुत कमजोर हो चुका था।

डॉ अम्बेडकर के अनुसार विभाजन और विघटन जाति व्यवस्था की विशेषताएँ हैं, इससे सामाजिक अशांति पैदा होती है। उन्होंने कहा कि भारत न केवल विभिन्न जातियों का एकत्रीकरण है, यह स्वार्थी और स्वकेन्द्रित लोगों के समूहों का एक संग्रह भी है जहाँ दुश्मनी की यादें हमेशा ताजा रहती हैं। इसलिए वे एक–दूसरे को माफ नहीं कर सकते थे यह भावना उन्हें साथ नहीं आने देती।

डॉ अम्बेडकर ने आगे बताया कि जाति व्यवस्था ने हिन्दू धर्म कमज़ोर बनाया। जाति व्यवस्था सामाजिक स्थान बनाने में असमर्थ है। इसके अलावा हिंदू व्यक्ति के लिए अन्य धर्म अपनाकर वापस हिंदू धर्म में आने का कोई प्रावधान नहीं था। इसलिए हिन्दू धर्म कमजोर हो गया।

डॉ अंबेडकर उन लोगों के खिलाफ हैं जो दावा करते हैं कि हिंदू समाज में विविधता है क्योंकि उसके अनुसार एकता और सामाजिक एकजुटता रीति–रिवाजों, विचारों और शारीरिक निकटता में समानता मात्र से नहीं बनती बल्कि ये भाईचारा और दोस्ती की भावना से बन सकती है।

डॉ अंबेडकर ने जाति व्यवस्था के कारण विधवा विवाह, बाल विवाह और सती प्रथा की समस्याओं का पता लगाया। उनके अनुसार अधिशेष मनुष्य और अधिशेष महिला (सरप्लस मनुष्य व सरप्लस महिला) के भद्दे सिद्धांत की उत्पत्ति इन प्रथाओं और रीति–रिवाजों के लिए जिम्मेदार है।

डॉ अंबेडकर ने भी वर्ण व्यवस्था का गहन आलोचनात्मक मूल्यांकन किया क्योंकि इसने समाज को चार वर्ण में विभाजित किया, प्रत्येक वर्ण के लिए कुछ कर्तव्य निर्धारित किए गए थे। पहले वर्ण ब्राह्मण को शिक्षा ग्रहण, शिक्षा देने, सम्पत्ति व अस्त्र–शस्त्र रखने का अधिकार था। क्षत्रिय को शिक्षा ग्रहण, सम्पत्ति व अस्त्र–शस्त्र रखने का अधिकार था। वैश्यों को शिक्षा ग्रहण, सम्पत्ति रखने, व्यापार व वाणिज्य का अधिकार था। शूद्रों के पास चारों अधिकार नहीं थे। उन्हें ऊपरी वर्णों की सेवा का कार्य सौंपा गया था।

ऐसा माना जाता था कि यह सामाजिक व्यवस्था दिव्य आदेश का परिणाम है और प्रत्येक व्यक्ति अपने पिछले कर्मों के अनुसार एक विशेष वर्ण में जन्म लेता है। इसे पवित्र और अपरिहार्य भी

माना जाता था। यह माना जाता था कि यदि प्रत्येक व्यक्ति उसे सौंपे गये कर्तव्यों का पालन करता है तो समाज का संगठन और विनियमन सामंजस्यपूर्ण होगा।[22]

डॉ अंबेडकर वर्ण–व्यवस्था से सहमत नहीं थे। इसने केवल एक विशेष वर्ग यानी ब्राह्मणों के हितों को पोषित किया। जैसा कि प्रो जाटव ने कहा है डॉ अंबेडकर के लिए वर्ण व्यवस्था स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्वके विचारों को मान्यता नहीं देती है। वर्ण व्यवस्था सामाजिक असमानता को बढ़ाती है और मानव के व्यक्तित्व को जानबूझकर नीच बनाने की वकालत करती है। इसमें ब्राह्मणों से नीचे आने वाले वर्ण की कोई आर्थिक सुरक्षा नहीं हैं। इसने हिंदू सामाजिक व्यवस्था में पदसोपानिक चरित्र की स्थापना की। यह सामाजिक असमानता के एक आधिकारिक सिद्धांत में विश्वास करता है। यही कारण है कि डॉ अम्बेडकर ने वर्णाश्रम धर्म के संपूर्ण दर्शन को खारिज कर दिया। वर्ण व्यवस्था उन सभी का विरोध करता है जो सामाजिक न्याय के भाव की चर्चा करता है।[23]

न्याय के वैदिक सिद्धांत में लिखा है कि प्रत्येक व्यक्ति को वर्णाश्रम–धर्म के कर्तव्यों का पालन उसकी जाति के अनुसार करना होगा। यह विचार ब्राह्मण शास्त्रों द्वारा समर्थित था। यह विचार इसलिए असहनीय है क्योंकि प्रत्येक वर्ण के लिए कर्तव्यों का वितरण सामाजिक असमानता पर आधारित है। इसमें केवल ब्राह्मणों को सर्वोच्च और पवित्र दर्जा दिया है और बाकी लोगों को उनसे नीचा माना गया। ब्राह्मण को व्यापक अधिकार दिए गए ताकि वे अन्य लोगों का नियंत्रण और दमन कर सकें। हर बात धर्म, नैतिकता, कथन, कानून, राज्य आदि की व्याख्या ब्राह्मणों के हित में ही की गई थी।[24]

उनके अनुसार अस्पृश्यता उच्च जाति के लोगों की नीची जाति के लोगों के प्रति मानसिकता है। अतः अस्पृश्यता समाज का मूलभूत गुण नहीं है। यह अपने आप को उच्च मानने वाले वर्ग द्वारा निचले वर्ग पर थोपा गया है। एसी मानसिकता धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मानदंडों के माध्यम से बनायी गई, यह समाजीकरण और संस्कृतिकरण की प्रक्रिया द्वारा आगे पोषित होती गई।[25]

अस्पृश्यता मूलरूप से हिंदू धर्म की विशेषता है जो ग्रेडेशन पर आधारित जाति व्यवस्था के कारण यह मानसिकता उत्पन्न हुई। यह किसी जाति विशेष में जन्म के आधार पर व्यक्ति को सामाजिक स्थिति प्रदान करता है, माना जाता है कि यह अपने पिछले जीवन में किए गए कार्यों से निर्धारित होता है। हिन्दू धर्म ब्राह्मणों को अन्य जातियों की तुलना में श्रेष्ठ मानता है। जिसने अपने पिछले जीवन में अच्छा कार्य किया वह ब्राह्मण परिवार में पैदा होगा। ऐसी धार्मिक मान्यताओं के अनुसार एक व्यक्ति खुद को या तो श्रेष्ठ समझता है या फिर दूसरों से हीन। इस मानसिकता के कारण एक व्यक्ति खुद के चारों ओर एक सीमा रेखा खींचकर खुद को सीमित कर लेता है। वह न तो इस सीमित स्थान से बाहर आता है और न ही वह दूसरों को इसमें प्रवेश की अनुमति देता है। नतीजतन छूत और अछूतों के बीच की खाई और गहरी हो जाती है।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 4, April 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

डॉ अंबेडकर ने इस तरह की मानसिकता का एक और कारण दिया क्रमिक–वर्गीकृत असमानता। श्रेणीबद्ध सामाजिक व्यवस्था में, खुद को उससे बाद वाली ग्रेड से श्रेष्ठ मानता है। डॉ अम्बेडकर ने इन्हें उच्चतम, उच्चतर और उच्च, निम्नतर और निम्न ग्रेड के रूप में वर्गीकृत किया। वे व्यक्ति जो निम्न ग्रेड के हैं उच्च ग्रेड चाहते हैं, लेकिन उच्चतम के खिलाफ विरोध नहीं कर सकते। इस व्यवस्था का सफलतापूर्वक विरोध करने के लिए उन लागों की मदद लेनी होगी जो निम्न श्रेणी में गिने जाते हैं। मदद का मतलब होगा कि उन्हें एक समान स्तर पर व्यवहार करना होगा लेकिन इस पर उच्च ग्रेड का व्यक्ति तैयार नहीं है। डॉ अम्बेडकर के अनुसार ऐसी मानसिकता के कारण अस्पृश्यता का उन्मूलन मुश्किल है।

विशेष रूप से शूद्र जातियों के संबंध में अस्पृश्यता का संबंध पवित्रता और अपवित्रता की अवधारणा है। छूत स्वयं को पवित्र मानते हैं और न केवल अछूतों के स्पर्श से बल्कि अछूतों की छाया से भी बचते हैं ताकि उनकी पवित्रता नष्ट न हो। अछूत लोग अस्पृश्यता के खिलाफ कोई तर्क नहीं दे सकते थे। उनके लिए कोई समान अधिकार नहीं, कोई न्याय नहीं है और कोई स्वतंत्रता नहीं थी क्योंकि गाँव का सामाजिक क्रम वंशानुगत था, छूत छूत बने रहे और अछूत अछूत बने रहे यह व्यवस्था स्थायी हो गई।

डॉ अंबेडकर ने बताया कि कई अनुचित प्रतिबंध और निषेधाज्ञाएं अछूतों पर थोपी गयी थी। हालाँकि अन्य हिंदुओं को इस अन्याय के बारे में पता था, लेकिन उन्होंने इस पर आंखें मूंद ली। अगर उनमें से कुछ लोग हस्तक्षेप करना चाहते, तो भी वे हिंदू होने के कारण नहीं कर सकते थे क्योंकि धर्म उन्हें ऐसा करने की अनुमति नहीं देता।[26]

डॉ अम्बेडकर अस्पृश्यता को हिंदू सामाजिक व्यवस्था में सामाजिक न्याय की शून्यता का आश्चर्यजनक उदाहरण मानते थे।

आदर्श समाज के आधार के रूप में सामाजिक न्याय–

डॉ अंबेडकर जिस आदर्श समाज को साकार करना चाहते थे, वह निम्नलिखित पर सिद्धांतों आधारित है–

- व्यक्ति अपने आप में एक साध्य है। समाज का लक्ष्य और उद्देश्य व्यक्ति और उसके व्यक्तित्व का विकास है। समाज व्यक्ति से ऊपर नहीं है, यदि व्यक्ति को स्वयं को समाज के अधीन करना पड़े तो यह उसके विकास के लिए ऐसी अधीनता आवश्यक है।
- समाज में रहने के लिए आवश्यक शर्तें स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व पर आधारित होनी को चाहिए।
- समाज को एक तर्कसंगत धर्म पर आधारित होना चाहिए।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 4, April 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

डॉ अंबेडकर के अनुसार एक व्यक्ति को एक साधन के रूप में नहीं माना जा सकता है बल्कि एक साध्य माना जाना चाहिए। क्योंकि प्रकृति द्वारा हर व्यक्ति स्वतंत्र है। इसलिए समाज को प्रत्येक व्यक्ति के विकास के लिए समान अवसर व स्थान प्रदान करना चाहिए। उन्होने कहा कि समाज को प्रत्येक मनुष्य को स्वतंत्रता, समानता और न्याय देकर उसकी देखभाल करनी चाहिए।

डॉ अम्बेडकर मानते हैं कि हिंदू सामाजिक व्यवस्था ने निचली जाति से संबंधित व्यक्तियों का उच्च जाति के हितों के लिए साधन के रूप में उपयोग किया। सभी प्रकार के नियम उच्च जातियों के अनुरूप बनाए गए। इस प्रकार क्रमिक हिंदू सामाजिक व्यवस्था ने निम्न जाति के लोगों के साथ घोर अन्याय किया।[27]

सामाजिक लोकतंत्र–

डॉ अम्बेडकर के अनुसार स्वतंत्रता, समानता और न्याय सामाजिक लोकतंत्र के लिए आवश्यक है। स्वतंत्रता, समानता और बंधुता के प्रति प्रतिबद्धता हमें जीवन के इस तरीके को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करती है। डॉ अम्बेडकर के अनुसार ये सिद्धांत सामाजिक लोकतंत्र को बनाए रखते हैं।[28]

स्वतंत्रता–डॉ अम्बेडकर के अनुसार स्वतंत्रता दो प्रकार की होती है नागरिक स्वतंत्रता और राजनीतिक स्वतंत्रता। नागरिक स्वतंत्रता भी तीन प्रकार की होती है (1) आंदोलन की स्वतंत्रता (2) भाषण की स्वतंत्रता, (3) कार्य की स्वतंत्रता। ये सभी प्रकार की स्वतंत्रताएं समाज के बौद्धिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक विकास के लिए आवश्यक हैं। डॉ अंबेडकर मानते हैं कि एक व्यक्ति को अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने, बोलने और सोचने के लिए स्वतंत्र होना चाहिए। राजनीतिक स्वतंत्रता सरकार, कानून और प्रशासन में भी व्यक्तिगत भागीदारी की गारंटी देती है। डॉ अंबेडकर इस स्वतंत्रता को महत्वपूर्ण मानते थे क्योंकि प्रत्येक जिम्मेदार नागरिक को सरकार के निर्णय और गतिविधियों पर नजर रखनी चाहिए।

समानता–जब डॉ अंबेडकर ने समानता की बात की तो उनका मतलब यह नहीं था कि सभी व्यक्ति बौद्धिक, मानसिक और शारीरिक विकास में समान हैं। वह जानते थे कि आनुवांशिकता, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण, शिक्षा के अवसर और व्यक्ति के स्वतंत्र प्रयास उसके व्यक्तित्व

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 4, April 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अलग–अलग परिस्थितियों में ढले हुए अलग–अलग व्यक्ति समान नहीं हो सकते, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हमें उनके साथ असमान व्यवहार करना चाहिए।

बंधुत्व–डॉ अंबेडकर ने हमारे साथियों के प्रति प्रेम, श्रद्धा और सम्मान की भावना बंधुत्व है। इसका मतलब है कि प्रत्येक व्यक्ति यह सोचता है कि समाज के सभी सदस्य रक्त में समान हैं। यह भावना सामाजिक एकता और एकीकरण को बढ़ावा देती है।

डॉ अम्बेडकर के अनुसार अनुसार किसी धर्म के सिद्धांतों को स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों के अनुरूप होना चाहिए। उनके अनुसार धर्म सिद्धांतों के आधार पर तर्कसंगत होना चाहिए। धर्म को सामाजिक लोकतंत्र के महत्व की पुष्टि करनी चाहिए। अगर समाज इस तरह के धर्म के आधार पर है व्यक्ति के पास अपने गुणों और कौशलों को विकसित और उसकी सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक स्थिति बदलने का अवसर होगा। समानता की भावना से समाज में एकता और एकीकरण होगा।[29]

डॉ अंबेडकर ने नियमों और सिद्धांतों के बीच अंतर किया। नियम कहता है व्यवहार कैसे किया जाए, सिद्धांत कहता है विशेष तरीके से व्यवहार किया जाए। नियमों द्वारा निर्धारित मानव व्यवहार यांत्रिक है और व्यक्ति में जिम्मेदारी की भावना उत्पन्न नहीं करता। सिद्धांतों पर आधारित व्यवहार जिम्मेदारी का भाव जगाता है, यह तर्क द्वारा निर्देशित हो। हिंदुओं को धर्म का पालन करने के लिए इनको अधिक से अधिक तर्कसंगत बनाने के लिए खुद को बदलना होगा।

डॉ अंबेडकर के अनुसार गौतम बुद्ध का धम्म एक तर्कसंगत धर्म है। हिन्दू धर्म भगवान की सर्वोच्च सत्ता को स्वीकार करता है। यह मानता है कि जो व्यक्ति खुद को पीड़ा से मुक्त करना चाहता है, उसे भागवान के समक्ष आत्मसमर्पण करना चाहिए। कारण और अनुभव को महत्व देने के बजाय यह धर्म पवित्र ग्रंथों को महत्व देता है और वेदों की सत्ता को स्वीकार करता है।

इसके विपरीत धम्म के संस्थापक गौतम बुद्ध ने किसी परम शक्ति का दावा नहीं किया और न ही उसने किसी पवित्र पुस्तक को महत्व दिया। इसके बजाय, उसने अनुभव और कारण को महत्व दिया। वह अक्सर अपने शिष्यों को किसी भी उपदेश को अनुभव और कारण की सहायता से परीक्षण किए बिना आँख बंद करके स्वीकार नहीं करने की सलाह देते थे। उन्होंने आगे कहा किसी समस्या के समाधान के लिए स्वयं को किसी परम शक्ति के समक्ष आत्मसमर्पण करने की आवश्यकता नहीं है। एक व्यक्ति स्वतंत्र रूप से उसकी समस्याओं का समाधान कर सकता है।

आधुनिक भारतीय सामाजिक दर्शन में योगदान–

डॉ अंबेडकर आधुनिक भारत के महत्वपूर्ण राजनीतिक और सामाजिक विचारकों में से एक थे। वे मानव विज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, दर्शन, धर्म, कानून, इतिहास और राजनीति जैसे विविध विषयों के अच्छे जानकार थे। विविध विषयों का उनका ज्ञान और उनके एक दलित के रूप में उनके कटु अनुभव ने उन्हें सामाजिक समस्याओं पर एक विशिष्ट तरीके से सोचने का मौका दिया। उन्होने राजनीतिक और आर्थिक सुधारों को समाज सुधार के लिए आवश्यक पूर्व शर्त नहीं माना और न ही उन्हें यह विश्वास था कि राजनीतिक स्वतंत्रता से सामाजिक सुधार होगा। उन्होंने कहा कि जब पेशवा महाराष्ट्र पर शासन कर रहे थे, तब राजनीतिक सत्ता भारतीयों के हाथ में थी। अभी तक सत्ता की इच्छा को आर्थिक दृष्टि से दखा जाए तो क्यों लोग मानसिक शांति के लिए अपने घर और धन का त्याग करते हैं।[30]

डॉ अंबेडकर के अनुसार राजनीतिक और आर्थिक सुधार शुरू करने से पहले लोगों को ऐसे सुधारों का लाभ उठाने में सक्षम बनाना आवश्यक है। इसके लिए समाज के मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता है। परिवार के सुधार से उच्च जातियों में ही बदलाव आएगा। निचली जातियां इस तरह के सुधार से कुछ हासिल नहीं करेंगी। इसके लिए उन्होंने तर्क दिया कि यदि हम प्रत्येक व्यक्ति को राजनीतिक और आर्थिक सुधारों का लाभ लेने में सक्षम बनाना चाहते हैं तो इसके लिए पूरे समाज को सुधारना आवश्यक है।

उनके अनुसार समाजिक कुरूतियाँ भी भारतीय समाज को निष्क्रिय और अक्षम बनाने के लिए जिम्मेदार हैं। इसलिए डॉ अंबेडकर ने सामाजिक न्याय के महत्व की वकालत की ताकि व्यक्ति, समाज और देश के संपूर्ण विकास के लिए जातिविहीन समाज की स्थापना की जा सके।

सन्दर्भ–

1 जाटव डी.आर., सोशल जस्टिस–इन इंडियन पर्सपेक्टिव, एबीडी पब्लिशर्स, राजस्थान, 2006, पृ.सं. 16

2 वही, पृ.सं 21

3 वही, पृ.सं 21

4 डॉ अम्बेडकर बी.आर. राइटिंग्स एंड स्पीचेज, वोल्यूम 3, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार, मुम्बई, 1987, पृ.सं. 25

5 वही, पृ.सं 25

6 जाटव डी.आर., सोशल जस्टिस–इन इंडियन पर्सपेक्टिव, एबीडी पब्लिशर्स, राजस्थान, 2006, पृ.सं. 95

7 डॉ अम्बेडकर बी.आर. राइटिंग्स एंड स्पीचेज, वोल्यूम 13, पृ.सं. 1216

8 वही, पृ.सं 1216–17

9 जाटव डी.आर., सोशल जस्टिस–इन इंडियन पर्सपेक्टिव, एबीडी पब्लिशर्स, राजस्थान, 2006, पृ.सं. 96–97 10 वही, पृ.सं 106

11 वही, पृ.सं 106

12 डॉ अम्बेडकर बी.आर. राइटिंग्स एंड स्पीचेज, वोल्यूम 3, पृ.सं. 25

13 वही

14 वही

15 वही

16 वही

17 वही

18 वही

19 वही

20 डॉ अम्बेडकर बी.आर. एनाइहिलेशन ऑफ कास्ट, अर्नोल्ड पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1990

21 वही

22 जाटव डी.आर., पूर्वोक्त, पृ.सं. 46–47

23 वही पृ.सं. 98

24 वही पृ.सं. 100

25 डॉ अम्बेडकर बी.आर. राइटिंग्स एंड स्पीचेज, वोल्यूम 3

26 डॉ अम्बेडकर बी.आर. राइटिंग्स एंड स्पीचेज, वोल्यूम 5, 21

27 वही पृ.सं. 23

28 वही पृ.सं. 23

29 वही पृ.सं. 89

30 डॉ अम्बेडकर बी.आर. राइटिंग्स एंड स्पीचेज, वोल्यूम 3